IJAER/ May-June 2023/Volume-12/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

आलम के काव्य में रस योजना

डॉ. अंजुबाला सीमार
सहायक आचार्य–हिन्दी साहित्य (विभागाध्यक्ष)
उप प्राचार्य
श्री कृष्ण सत्संग बालिका स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय
सीकर, राजस्थान, भारत

शोध –संक्षेप

रीतिकालीन स्वछंद प्रेमधारा के कवियों में कवि आलम का नाम महत्वपूर्ण कवि के रूप में लिया जाता है। आलम का रचनाकाल संवत 1740 से 1760 के लगभग माना जाता है। आलम मूलतः स्वछन्द श्रृंगारिक कवि हैं। वास्तव में आलम के काव्य में प्रेमोन्मत्त काव्यधारा की सभी प्रवत्तियो के साथ ही काव्य–रसों का भी सुन्दर परिपाक हुआ है। आलम की कविताओं का आस्वादन करते हुए सहृदय प्रभावित हुए बिना नहीं रहता है। प्रस्तुत शोध पत्र में आलम के काव्य में प्रयुक्त रस–योजना का विवेचन किया गया है।

प्रस्तावना–

भारतीय काव्यशास्त्रीय विवेचन में रस का गौरवपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय आचार्यों ने काव्य और उसके उपादानों के निरूपण में प्रायः रस को विशेष महत्व दिया है। आचार्य भरतमुनि ने रस सम्बन्धी सामग्री को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में प्रस्तुत किया है। अन्य सम्प्रदाय अथवा काव्यसिद्धान्त के आचार्य भी काव्य में रस की भूमिका की उपेक्षा नहीं कर सके। भामह, दण्डी और उद्भट यद्यपि अंलकारवादी थे फिर भी इन्होंने रस को समुचित स्थान दिया। यही स्थिती रीतिवादी वामन, ध्वनिवादी आनन्दवर्धन और वक्रोक्तिवादी कुन्तक की रही।[1] साहित्य दर्पण के रचियता आचार्य विश्वनाथ ने तो ''रसात्मकं वाक्यं काव्यम्'' कहकर रस को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया।

हिन्दी साहित्य कोश में रस शब्द का विवेचन करते हुए लिखा है – व्युत्पति के अनुसार इसके दो अर्थ होते हैं – (1) आस्वाद – ''रस्यते आस्वाद्यते इति रस''। (2) द्रवत्व – ''सरते इति रसः'' साधारण रूपमें इसके अनेक भिन्नार्थक प्रयोग हुए हैं, जैसे षड्रस, इन्द्रियसुख, दूध, शब्द, रूप, गंध, स्पर्शादि गुणों में से एक आनन्द। आयुर्वेद में रसायन, पारद, वीर्य, जल अथवा जलीय पदार्थ तथा रसनेन्द्रिय ग्राह्म पदार्थ के लिए इसका प्रयोग हुआ है। वेदों में सोमरस, वनस्पतियों का द्रव, दूध, जल, स्वाद और गंध के लिए, शतपथ ब्राह्मण में मधु के लिए, उपनिषदों में प्राणतत्व या स्वाद के लिए, रामायण में जीवन–रस पेय तथा विष और महाभारत में जल, सुरा, गन्ध, काम एंव स्नेह के लिए इसका प्रयोग मिलता है।[2] इस प्रकार अर्थ की दृष्टि से रस एक अनेकार्थ शब्द हैं जो इसकी महत्ता का परिचायक है।

काव्य शास्त्र में रस काव्यास्वाद और काव्यानन्द के अर्थ का प्रतिपादक है। भरतमुनि ने सर्वप्रथम इसका साहित्य की दृष्टि से नाटक के सम्बन्ध में प्रयोग करते हुए लिखा है कि ''विभावानुभावव्यभिचारी संयोगाद्रसनिष्पत्ति'' अर्थात् विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव के संयोग से रस निष्पत्ति होती है। इसलिए उक्त प्रसंग में इसकी परिभाषा इस प्रकार की गई है– काव्य पढ़ने, सुनने या अभिनय देखने पर विभावादि के संयोग से निष्पन्न होने वाली आनन्दात्मक चित्तवृत्ति ही रस है।[3]

आलम स्वछन्द प्रेम के कवि थे। उनका हृदय प्रेम के जल से लबालब भरा हुआ था। यही कारण हैं कि प्रेम के सागर में वे गोते लगाते रहते थे। उन्होंने अपना सब कुछ खोकर बदले में प्रियतम को पाया था और कविता प्रेम के अनुसंधान में ही लीन रही। कवि आलम के काव्य में केवल विविध भावों की योजना ही नहीं हुई है, बल्कि वे भाव स्थायित्व प्राप्त करके कई स्थलों पर रस–कोटि तक पहुँच गये हैं। अतएव आलम के काव्य में विविध रसों का चित्रण अतयन्त सजीवता एवं मार्मिकता के साथ मिलता है और कवि को रस निरूपण में अत्यन्त सफलता भी प्राप्त हुई है। आलम के काव्य में जिन रसों का सुन्दर परिपाक हुआ है, उन्हें निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जाता है–

श्रृंगार रस–

साहित्य मनीषियों ने श्रृंगार रस का विश्लेषण करते हुए लिखा है– जो रचना मानव–हृदय की मधुरतम भूख, काम उज्जीवित एंव परितृप्त करेगी। वह श्रृंगार रस की रचना कही जायेगी।[4] भानुदत्त ने श्रृंगार रस को परिभाषित करते हुए लिखा है–

''यूनो; पर स्परं परिपूर्णः प्रमोदः सम्यक सम्पूर्णरतिभावो व श्रृंगार''[5]

अर्थात् नर–नारी जब एक–दूसरे के मनोनुकूल हो, परिपूर्ण आनन्द का उपभोग करें या उसका रतिभाव पूर्णतया प्रस्फुट हो जाय, तबवह श्रृंगार रस कहलाता है।

श्रृंगार रस में नायक–नायिका आलम्बन विभाव चन्द्रमा, चन्दन, भ्रमर आदि उद्दीपन विभाव प्रेमपूर्ण वार्तालाप, आलिंगन, रोमांच, स्वेद, कम्प, भ्रू–भंग आदि अनुभाव और आवेग, चपलता, लज्जा, हर्ष, मोह, गर्व, मद आदि संचारी भाव होते है।

संयोगश्रृंगार–

श्रृंगार रस के उपर्युक्त लक्षणों के आलोक में आलम की रचनाओं का अनुशील करने पर ज्ञात होता है कि कवि आलम की रचनाओं में श्रृंगार रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। आलम ने अपनी 'स्याम स्नेही' रचना में श्री कृष्ण ओर रूक्मिणी के प्रथम समागम के चित्रण में संयोग श्रृंगार की अत्यन्त मार्मिक व्यंजना प्रस्तुत की है–

''खेलि जाम जुग रैनि विहाई

बैठे बहुरि सेज पर जाई

लाज भरे लोइन मतवारे

संकुचि कुंवरि नहिं जोरे तारे

प्रथम समागम के उर डरई

कंपत तन धर हर हिय करई

छिनु छिनु किस्न कछू अनुसारा

छुवतहि मदन मोद संचारा।।''[6]

इसी प्रकार ''माधवानल कामकंदला'' में भी आलम ने "श्रृंगाररस का प्रभावपूर्ण वर्णन किया है; उदारणार्थ निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

मदन धनुष सरपंच लै, माधौ सनमुख आई।

कामकंदला निरखि कै, सरन सरन गुहिराइ।।

मिली प्रंजक पर जुगल किलोलहि। बचन चातुरी दोऊ बोलहिं।।

सखी सिखाइ कंदला गई आवर मन्दिर डाढ़ी भई।

बैठि कंदला माधव पासा। सूर संग जनु चंद प्रकासा।।[7]

वियोगश्रृंगार –

आलम ने जिस प्रकार संयोग श्रृंगार का आकर्षक व मादक चित्रण किया है, वैसा ही विप्रलम्भ अर्थात् वियोग श्रृंगार का स्वाभाविक तथा मर्मस्पर्शी वर्णन करने में सफलता प्राप्त की है। 'साहित्य दर्पण' में वियोग श्रृंगार की व्याख्या करते हुए कहा गया है–

यत्र तु रतिः प्रकृष्टा ना मीष्ट मुपैती बिप्रलम्भौसौ।

अभीष्टं नायकं नायिकां वा।

स च पूर्वराग मान प्रवास करूणात्मकश्चुर्धा स्यात्।।[8]

अर्थात 'वियोग' तो वह श्रृंगार भेद है जिसमें नायक–नायिका का परस्परानुराग तो प्रगाढ़ हुआ करता है, किन्तु परस्पर मिलन नहीं होने पाता। यहां अभीष्ट का अभिप्राय है (नायिका की दृष्टि से) नायक का और (नायक की दृष्टि से) नायिका का। यह विप्रलम्भ श्रृंगार भी चार प्रकार का हुआ करता है– (1) पूर्वराग विप्रलम्भ; (2) मान विप्रलम्भ; (3) प्रवास विप्रलम्भ; और (4) करूण विप्रलम्भ। वियोग श्रृंगार में नायक या नायिका का भयभीत होना तड़पना, छटपटाना, शोक संतप्त होना आदि अनुभाव होते हैं और चिन्ता, औत्सुक्य, लज्जा, स्मृति, विरोध, शोक आदि अनेक संचारी भाव होते हैं। आलम के काव्य में विप्रलम्भ के चारों रूपों का वर्णन मिलता है–

पूर्वराग वियोग–

आलम की प्रबन्ध रचना 'स्याम स्नेही' में पूर्वराग वियोग का सुन्दर उदाहरण मिलता है। रूक्मिणी अपनी सखी से श्री कृष्ण के गुणों का वर्णन सुनाती है और पार्वती जी की पूजा करके वह श्री कृष्ण के गुणों का वर्णन सुनती है और पार्वती जी की पूजा करके वह श्री कृष्ण को वर रूप में प्राप्त करने की इच्छा करती है–

गवरि पूजि इतनी जनि खगहू

कवल नैन सुन्दर वरू मागहु

हित पूजा देवी कै करहू

मन मह ध्यान किस्न बर धरहू।।[9]

रूक्मिणी का यह पूर्वराग वियोग तब और अधिक तीव्र हो जाता है जब उसका भाई कृष्ण के बजाय शिशुपाल को रूक्मिणी से विवाह करने के लिए लग्न का टीका भिजवा देता है। इससे वह हताश और निराश हो जाती है। उसकी अवस्था का वर्णन करते हुए कवि लिखता है–

हरित पीत भई स्याम स्नेही

ता यह रही मीन हुई दही

तलफै तनक नीर के डारे

जीर्यै न नेह नीर ते न्यारे।[10]

वह अपनी असहाय अवस्था का वर्णन करते हुए श्री कृष्ण को पत्र लिखती है। वह श्री कृष्ण को पत्र में सन्देश लिखती है–

डारी मन की डोरि गाढ़े गहि यहु सजना।

छोड़हु प्रीति न तौरि तन जिमि गुडिया नीर जौ।।[11]

इस प्रकार पूर्वराग विप्रलम्भ श्रृंगार का कवि ने मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

मान विप्रलम्भ–

प्रियापराध जनित कोप को मान कहते हैं। इसके भी दो भेद होते हैं– प्रणयमान और ईर्ष्यामान। दोनों के हृदय में भरपूर प्रेम होने पर भी जब प्रिय–प्रिया एक दूसरे से कुपित हों, तब प्रणयमान होता है। इसका समाधान यह कहकर किया गया है कि प्रेम की गति कुटिल होती है, यद्यपि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ऐसा मान नायक–नायिका पारस्परिक अनुराग की पुष्टि के हेतु करते हैं। पति की अन्य नारी में आसक्ति देखने, अनुमान करने या किसी से सुन लेने पर स्त्रियों द्वारा किया गया मान 'ईर्ष्यामान' कहलाता है।[12]

आलम के काव्य में प्रायः प्रथम प्रकार के मान का अधिक वर्णन हुआ है। कवि ने 'आलम केलि' में 'मानिनी' और 'मान वर्णन' शीर्षक के अन्तर्गत आये हुए छन्दों में मान विप्रलम्भ का सुन्दर निरूपण हुआ है। कतिपय छंद उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं–

मान कला नवला सुनि के सहुलासनि लाल मनावन आये।

'आलम' अलि न मानै कह्यो पै तिया मन में मन मोहन भाये।[13]

प्रवास विप्रलम्भ–

आलम ने प्रवास वियोग का वर्णन ''माधवानल कामकंदला'' में मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है। माधव जब कामवती नगरी में कामकंदला को छोड़कर चला जाता है– तब कामकंदला विरह वेदना के कारण मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ती है। परन्तु जब सखियाँ माधव का नाम लेकर पुकारती हैं। तब उसकी चेतना लौटती है। वह अपनी विरह–वेदना को अभिव्यक्त करती है। कामकंदला की निम्नांकित उक्तियों में प्रवास वियोग का मार्मिक चित्रण हुआ है–

सखी आइकर बाँह छुडाई। चल्यो विप्र त्रिय गई मुरझाई।।

काम मुर्छित धरनि मंह परी। सखी आइ करि अंकन भरी।।[14]

करूण विप्रलम्भ–

नायक–नायिका में से एक के मर जाने पर दूसरा जो दुःखी होता है। उसे करूण–विप्रलम्भ कहते हैं, लेकिन विप्रलम्भ तभी माना जायेगा जब परलोकगत व्यक्ति के इसी जन्म में इसी देह से पुनः मिलने की आशा बनी रहे। यदि मिलन की आशा सर्वथा नष्ट हो जाय तो वहाँ स्थायी भाव शोक होने से करूण–रस होगा, करूण विप्रलम्भ श्रृंगार नहीं। ... लेकिन प्रिय जीवित है तथा मिलन की भौतिक सम्भावना सर्वथा विलुप्त नहीं हुई है, करूण विप्रलम्भ माना जायेगा।[15]

उक्त दृष्टि से विचार करने पर आलम के काव्य में करूण विप्रलम्भ का कोई प्रसंग उपलब्ध नहीं होता है। कवि की माधवानल कामकंदला रचना में राजा विक्रम माधव तथा कामकंदला के प्रेम की परीक्षा लेने के लिए उन्हें एक–दूसरे के मरने की खबर देता है और वे दोनों ही यह समाचार सुनकर मर जाते हैं। इस प्रकार करूण विप्रलम्भ के स्थान पर करूण रस का परिपाक हो जाता है। अतः इसका उल्लेख 'करूण रस' शीर्षक के अन्तर्गत किया जायेगा।

विप्रलम्भ की कामदशाएँ

विप्रलम्भ श्रृंगार से सम्बन्धित दस काम दशाओं का उल्लेख श्री आचार्यों ने किया है, ये काम दशाएँ है– अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुण–कथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मृति या मरण। ––– प्रिय से तन से मिलन की इच्छा अभिलाषा है, प्राप्ति के उपायों की खोज चिन्ता हैं, सुखदायी वस्तुएँ जब दुःखदायी बन जाये तो उद्वेग है, चित्त के व्याकुल होने से अटपटी बातें करना प्रलाप है; जड़–चेतन का विचार न रहना उन्माद है; दीर्घ निःश्वास, पांडुता, दुर्बलता इत्यादि व्याधि है; अंगों तथा मन का चेष्टा शून्य होना जड़ता है। रस का विच्छेदक होने से मरण का वर्णन प्रायः निषिद्ध ठहराया जाता है।[16]

वीर रस–

साहित्य मनीषियों ने वीर रस को श्रृंगार रस के साथ स्पर्धा करने वाला रस माना है। इस रस को श्रृंगार रौद्र तथा वीभत्स रस के साथ मूल रसो में परिगणित किया है। डॉ. भागीरथ मिश्र के अनुसार इस रस का देवता महेन्द्र माना गया है। इसका वर्ण सोने के समान गौर है। वीर का स्थायी भाव उत्साह होता है। मानसिक वृत्तियों में इसका सम्बन्ध युयुत्सा से माना जा सकता है। इसका आलम्बन शत्रु, ऐश्वर्य साहसिक कार्य, यश आदि है। उद्धीपन, चेष्टा, प्रदर्शन, ललकार आदि। अनुभाव आंखों का लाल होना, भुजाओं या अंगो का संचालन, करना आदि है। इसके संचारी भाव गर्व, उग्रता, तर्क, असूया, मति आदि है।[17]

वीर रस के भेदों के सम्बन्ध में साहित्याचार्यों में तनिक मतभेद हैं। भरत भोजराज और भानुदत्त ने तीन भेद माने हैं। भरत के अनुसार दानवीर धर्मवीर युद्धवीर। भोजराज ने धर्मवीर के बदलें दयावीर का निरूपण किया है। भानुदत्त ने धर्मवीर को न मानकर युद्धवीर, दानवीर और दयावीर ये ही तीन भेद बताये हैं।[18]

आलम ने अपनी प्रबन्ध रचनाओं में ''माधवानल कामकंदला'' तथा 'स्याम स्नही' में वीर रस का सुन्दर और प्रभावपूर्ण निरूपण किया है। ''माधवानल कामकंदला''मे जब राजा विक्रम कामसेन राजा को कामकंदला को माधव को देने का आग्रह करता है और जब वह राजा विक्रम की बात को नहीं मानता है तो विक्रम राजा कामसेन पर आक्रमण कर देता है। राजा कामसेन और राजा विक्रम का युद्ध भूमी मे आमना–सामना

होता है और दोनों की सेनाओं के वीर एक–दूसरे पर धावा बोलकर आक्रमण करते हैं। कवि ने इस युद्ध का सजीव चित्रण किया है ।

निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं

सुनि मरू कौ रागु, भुज फरकै रन बीर के।

युद्ध जाई मन लाइ 'मारू' मुख उच्चरैं।

अग्नि बान छटैं दुहुँ ओरा। चकित त्रि जुकित हाथी घोड़ा।।

धनुषहि धनुष वीर जो नाहा। अटकैं पंच बान सौं काहा।।[19]

इसी प्रकार कवि ने 'स्याम स्नेही' में भी श्री कृष्ण द्वारा रूक्मिणी हरण के बाद शिशुपाल और रूक्म कुमार की सेना के साथ जो युद्ध किया

उसका वर्णन भी सुंदर बन पड़ा है;

उदाहरणार्थ–

पहिलेहि बात कहहि जे ऊँची।

सैन्य रूकुम की आनि पहूँची।।[20]

आलम ने 'अक्षर मालिक' रचना मे दयावीर का भी सुन्दर निरूपण किया है। ग्राह के आक्रमण से ग्रस्त गजराज जब भगवान श्री कृष्ण को सहायता के लिए पुकारता है तो वे दयार्द्र होकर रथ सारथि आदि सबको छोड़कर अपने भक्त को बचाने के लिए पैदल ही दौड़ पडते है; यथा–

आलम सु कवि प्यारी अबला अकेली छाडी,

हाथ ते हथ्यार छाड़ै रथ छाडयौ सारथी।।[21]

रौद्र रस–

भरतमुनि ने ''तेषामुत्पत्ति हेतवश्चत्वारो रसाः श्रृंगारों रौद्रो वीरो वीभत्सइति।''[22] कहकर श्रृंगार, रौद्र, वीर तथा वीभत्स इन चार रसों को ही प्रधानता दी है। भरत के अनुसार इन चार रसों से ही अन्य रसों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार रौद्र रस का रसों में और काव्य में महत्वपूर्ण स्थान है। रौद्र रस का स्थायी भाव क्रोध है। इसके देवता रूद्र माने जाते हैं और रंग लाल वर्ण का माना गया है। आलम्बन शत्रु या कपटी दुराचारी व्यक्ति होता है। उद्दीपन अपमान और निन्दा से भरे वचन होते है। अनुभाव भौंहे तानना, दांत पीसना, ललकारना, काँपना मुँह लाल हो जाना, हाथ चलाना आदि है। संचारी गर्व, अमर्ष, चपलता, आवेग आदि है।[23]

रौद्र रस एंव वीर रस में आलम्बन समान होते हैं किन्तु इनके स्थायी भावों की भिन्नता स्पष्ट है। वीर का स्थायी भाव उत्साह है, जिसमें भी शत्रु के दुर्वचनादि से अपमानित होने की भावना सन्निहित है, लेकिन अवज्ञादि से क्रोध उत्पन्न होता है, उसमें ''प्रमोद प्रतिकूलता'' अर्थातानन्द को विच्छिन्न करने की शक्ति वर्तमान रहती है।––– अतएव इस स्फूर्तिवर्धक प्रमोद अथवा उल्लास की उपस्थिति के ज्ञान से वीर रस

रौद्र से पृथक पहचाना जा सकता है। इसके अतिरिक्त नेत्र एवं मुख का लाल होना कठोर वचन बोलना इत्यादि अनुभव रौद्र रस में ही होते हैं, वीर में नहीं।[24]

आलम ने 'स्याम स्नेही' में रौद्र रस का सुन्दर प्रयोग किया है। रूक्म कुमार को जब रूक्मिणी हरण का समाचार मिलता है तो वह श्री कृष्ण के लिए अपमान जनक शब्दों का प्रयोग करता हुआ कहता है–

यह कलि लोग उताइल धावै

गूजर पूत जानि नहिं पावै

गोकुल गोपीजन हरन गोरस हरन अहीर।

अब इहि हरन जौ बंचिहै तब जानहि बर बीर।।[25]

इस प्रकार श्री कृष्ण को अपमान जनक शब्दों में ललकारने पर वे युद्ध के लिए सन्नद्ध होते हैं। दोनों सेनाओं का आमना–सामना होने पर एक–दूसरे को ललकारते है। और मारकट मच जाती है, निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है–

केहरि क्रोध जाई हंकारयो

खुनस खर्ग कुम्भस्थल झार्यो

कीन्हिसि घाइ लाइ भुज भले

टारिसि रूहिर चवर चुइ चले[26]

वीभत्स रस–

वीभत्स रस का स्थायी भाव जुगुप्सा या घृणा है। इसके देवता महाकाल माने जाते हैं और रंग नील वर्ण है। इस रस का आलम्बन फूहड़पन, रूधिर, मांस, सड़ी–गली तथा दुर्गन्धिमय वस्तुएँ हैं। उद्दीपन इस प्रकार की वस्तुओं की चर्चा करना देखना आदि हैं। थूकना, मुँह फेरना, नाक सिकोड़ना आदि अनुभाव तथा भय, आवेश व्याधि, अपस्मार आदि संचारी भाव हैं।[27]

आलम ने 'माधवानल कामकंदला' में राजा कामसेन और राज' विक्रम के युद्ध के समय उपस्थित वीभत्स दृश्य का मार्मिक चित्रण किया है; उद्धाहरणार्थ–

बोलै घाव 'मारू' उच्चारहीं। जहँ तहँ रकत के नारे ठरहीं।

फूटै मुँड चलै रन लोहुव। सुभटै सुभय फिरै जन कुहुरूव।।[28]

शांत रस–

काव्य शास्त्रियों ने शांतरस का विवेचन करते हुए लिखा है कि श्रृगांर, वीर और शांत की गणना प्रधान रसों में होती है, क्योंकि ये उदात्त वृत्तियों के प्रेरक हैं और महाकाव्य में इनमें से एक प्रधान या अंगी रस के रूप में प्रतिष्ठित होता है। शांत रस का स्थायी भाव निर्वेद है। इसके देवता विष्णु माने गये हैं। इसका रंग कुन्द पुष्प या चन्द्रमा के समान शुक्ल माना गया है। आलम्बन संसार की असारता और क्षण

भंगुरता है। उद्दीपन सत्संग , श्मशान या तीर्थ दर्शन ,मृतक आदि हैं। अनुभाव रोमांच अश्रु, पश्चाताप, ग्लानि आदि हैं। संचारी भाव हर्ष, धृति, मति, स्मरण, बोध आदि हैं।[29]

केशवदास ने 'शम' के कारण शांत रस को ही 'शम रस' नाम दे दिया है।

केशव लिखते हैं–

सबते होय उदास मन, बसै एक ही ठौर।

ताही सों समरस कहत, केसव कवि सिरमौर।।[30]

आलम ने अपनी रचना 'आलम केलि' में यत्र–तत्र शांतरस का भी निरूपण किया है, जैसा कि निम्न छन्द से स्पष्ट है–

सेजु सुखासन हेम हीर पट चीर बिबिध–बर,

निरखि–निरखि मन मुदित होत निज सुख सम्पति परे।

आपु बने बनिता बनाइ बिलसत बिलास अति,

जग रक्षक जगदीस सो जु भूल्यो जु अलप मति।।[31]

वात्सल्य रस –

प्रारम्भ में वात्सल्य रस को स्वतंत्र रस न मानकर श्रृंगार के अन्तर्गत ही स्वीकार किया गया, परन्तु बाद में इसे रस के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई। वात्सल्य शब्द का निमार्ण 'वत्स' शब्द से हुआ है, जो पुत्रादि विषयक रति का ही दूसरा नाम है। पहले–पहल साहित्याचार्यों ने इसे 'वत्सल रस' नाम दिया। आचार्य विश्वनाथ ने 'साहित्य दर्पण' में 'वात्सल्य रस' का लक्षण निरूपण करते हुए लिखा है – ''स्फुटं चमत्कारितया वत्सलंच रसं विदु। स्थायी वत्सलता स्नेहः पुत्राद्यालम्बंनं मतम्''[32]

अर्थात् प्रकट चमत्कार होने के कारण वत्सल को भी रस माना जाता है। वात्सल्य स्नेह इसका स्थायी भाव होता है। तथा पुत्रादि आलम्बनों से और स्पष्ट करते हुए आचार्य विश्वनाथ लिखते हैं–

''इस रस में पुत्रादि की चेष्टाओं में उनकी विद्या, शूरता, दया आदि उद्दीपन विभाव का कार्य करते हैं। आलिंगन अंगस्पर्श शिरश्चुंम्बन सस्नेह वीक्षण, रोमांच आनन्दाश्र आदि इसके अनुभाव हैं। इसके व्यभिचारी भावों में अनिष्टाशंका , हर्ष , गर्व आदि का समावेश है। इसका वर्ण पद्म गर्भ वर्ण (शुभ्र पीत) है और इसके देवता गौरी आदि षोडश मातृ चक्र हैं।

आलम ने अपनी रचना 'आलम केलि' का प्रारम्भ ही वात्सल्य रस से किया है। आलम केलि का प्रथम छन्द श्री कृष्ण की बाल लीला से सम्बद्ध है। कवि द्वारा प्रस्तुत छन्द में वात्सल्य रस का सुन्दर परिपाक हुआ है–

पालने खेलते नन्द–ललन छलन बलि

गोद लै लै ललना करति मोद गान है।

'आलम' सुकवि पल पल मैया पावै सुख,

पोषति पीयूष सुकरत पय यान है।[33]

करूण रस –

विश्वनाथ ने 'साहित्य दर्पण' में करूण रस के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''करूण रस' वह रस है जिसे शोकरूप स्थायिभाव का पूर्णाभिव्यंजन कहा गया है। इसका आर्विभाव इष्टनाश और अनिष्ट प्राप्ति से सम्भव है। इसका वर्ण कपोतवर्ण है और इसके जो देवता माने गये हैं वे यम हैं। इसका 'स्थायी' भाव 'शोक' है। इसका जो 'आलम्बन' है वह विनिष्ट व्यक्ति है। इसके उद्दीपन वर्ग में दाहकर्म आदि की गणना है। देवनिन्दन ,भूमि पतन, क्रन्दन, वैवर्ण्य, उच्छ्वास, विश्वास, स्तम्भ, प्रलपन आदि इसके अनुभाव माने गये हैं। साथ ही साथ निर्वेद, मोह अपस्मार, व्याधि, ग्लानि स्मृति, श्रम, विषाद, जड़ता, उन्माद और चिन्ता आदि इसके व्यभिचारी भाव हैं।[34]

हिन्दी के आचार्य कवियों ने भी प्रायः 'साहित्य दर्पण' के लक्षणों को ही मान्यता दी है। आचार्य कवि चिन्तामणि के अनुसार–

इष्टनास कि अनिष्ट की आगम ते जो होई।

दुःख सोक थाई जहाँ, भाव करून कह सोइ।। [35]

आलम ने करूण रस का 'माधवानल कामकंदला' में मार्मिक वर्णन किया है। राजा विक्रम जब माधव तथा कंदला की परीक्षा लेने के लिए माधव को कंदला के मरने की तथा कंदला को माधव को मारने की झूठी सूचना देता है तो वे दोनों मर जाते हैं। इस घटना से राजा विक्रम शोक को प्राप्त होता है। वह सोचता है कि ब्रह्महत्या और स्त्री हत्या का उसने पाप किया है। उसे आत्मग्लानि होती है। दोनों के मरने पर वह चिन्ता व्यक्त करता है। साथ ही वह निर्वेद भाव का प्रकाशन करता है। इस प्रकार माधव और कंदला आलंबन हैं। चिता आदि को तैयार करना उद्दीपन विभाव हैं। राजा का चिता में प्रवेश के लिए उद्यत अनुभाव है तथा गलानि, चिन्ता, निर्वेद आदि व्यभिचारी भाव है।

उदाहरणार्थ–

करि उपचार लोग सब हारे। राजहिं देखि आँसु भरि ढारे।।

प्रथमहि तिरिया वध मैं कीन्हाँ। पुनहि विप्र जानत विषदीन्हाँ।।[36]

भक्ति रस–

'भक्ति रस' को रस के रूप में मानने को लेकर विद्धानों में तीव्र मतभेद रहे हैं। हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के पूर्व तक अधिकांश आचार्यों ने 'भक्ति' को रस के रूप में मान्यता प्रदान नहीं की। यहाँ तक कि रस को काव्य की आत्मा मानने वाले आचार्य विश्वनाथ ने भी भक्ति को रस नहीं माना। भक्ति को रस के रूप में मान्यता प्रदान करने वालों में संस्कृत के महान् आचार्य पण्डितराज जगन्नाथ का गौरवपूर्ण स्थान है। पण्डितराज जगन्नाथ ने भक्ति रस का विवेचन करते हुए लिखा है – ''भक्ति रस कैसे हैं? भगवान जिसके आलम्बन हैं रोमांच, अक्षु पातादि जिसके अनुभाव हैं? 'भागवतादि पुराण श्रवण के समय भगवत भक्त जिसका प्रकट अनुभव करते हैं और भगवान के प्रति अनुराग स्वरूपा भक्ति ही जिसका स्थायी भाव है। उस भक्ति रस का शांत रस में अन्तर्भाव नहीं किया जा सकता, क्योंकि अनुराग और विराग परस्पर विरोधी हैं। [37]

डॉ. भागीरथ मिश्र के अनुसार भक्ति को रस रूप में प्रतिष्ठित करने वाले, मधुसूदन सरस्वती और रूप गोस्वामी है। [38]

वास्तव में जिस प्रकार श्रृंगार में प्रिय के प्रति रति की प्रधानता होती है, उसी प्रकार भक्ति में भी भक्त की भगवान के प्रति अनन्य अनुरक्ति होती है। एतदर्थ भक्ति को रस के रूप में मान्यता देना समीचीन जान पड़ता है।

आलम ने भी अपने काव्य में यत्र–तत्र अपनी भक्ति भावना को अभिव्यक्त किया है। 'आलम केलि' में कवि के भक्ति विषयक कतिपय छन्द इसके प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए 'देवी को कवित्त' कवि की भक्ति भावना का परिचायक है और उक्त कवित्त में कवि ने भक्ति रस का सुन्दर निरूपण किया है; जैसे –

भौन के दरस पुण्य भौन मेरे नेरे आयो,

छत्र–छाँह परसत छत्रनि सौं छयौ हौं।

मंगला के मंगल वे मंगल अनेग भये,

हिंगलाज राखी लाज याहि काज नयो हौं।

सेषमति 'सेख' ही सुसेष की सी दीनी तुम

रावरे सिखाये सिख ढिग आनि लयो हौं।

दुर्गा देवी तेरेइ दया ते दुर्ग नांघि आयो,

पारवती तुम्हें सुमिरत पार भयो हौं।। [39]

उपर्युक्त छन्द में 'दुर्गा देवी' भक्त आलम के लिए आलम्बन हैं। देवी का दर्शन उनकी छत्र छाया उद्दीपन हैं। भक्त का नमन करना सीख लेना' आदि अनुभाव है। 'सुमिरत पार भयौ ' में आनन्द जन्य रोमांच संचारी भाव है।

निष्कर्ष–

आलम ने श्रृंगार रस को रसराज के रूप में सभी रसों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया है। श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का हृदयग्राही वर्णन हुआ है। संयोग में नायक–नायिका के मिलन के अनुपम चित्र अंकित किए हैं। वियोग श्रृंगार के अन्तर्गत पूर्वराग, मान, प्रवास तथा करूण का मर्मस्पर्शी चित्रण करने के साथ वियोग की विभिन्न दशाओं का वर्णन भी सहृदय को अभिभूत करने वाला है। आलम के काव्य में श्रृंगार के अतिरिक्त वीर, रौद्र, वीभत्स, शांत तथा भक्ति रस का भी सफल परिपाक हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1– चौधरी,डॉ. सत्यदेव व गुप्त डॉ. शान्तिस्वरूप भारतीय पाश्चात्य काव्यशास्त्र का संक्षिप्त विवेचन पृष्ठ–49

2– शर्मा, डॉ. वेंकेट–रस, अलंकार, छन्द तथा अन्य काव्यांग, पृ. 47

3– हिन्दी साहित्य कोश, भाग–। पृ. 799

4– शर्मा डॉ. वेंकट–रस, अलंकार, छन्द तथा अन्य काव्यांग पृ. 49

5–आचार्य मम्मट–काव्य प्रकाश, 9.83

6– जसवन्त सिंह–भाषा भूषण 202

7– मम्मट–काव्य प्रकाश 9.84

8– केशवदास–कवि प्रिया 11:29, 34

9– मम्मट–काव्य प्रकाश 9:78

10–भिखारीदास–काव्य निर्णय

11– वही, पृ. 19

12– क काव्य प्रकाश 9:86

13– अलंकार शेखर में उद्धत , पृ. 32

14– वामन–काव्यलंकार सूत्रवृत्ति, पृ. 32

15– विश्वनाथ – साहित्य दर्पण 10:26

16– पद्माकर–पद्माभरण 26

17–भूषण–शिवराज भूषण छन्द सं. 70

18–वामन–काव्यालंकार सूत्र वृत्ति 4.3.5

19–मम्मट–काव्य प्रकाश, 10.96

20–हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1,पृ. 47

21–भामह–काव्यालंकार, 2.91

22–विश्वनाथ–साहित्य दर्पण 10.40

23–भूषण–शिवराज भूषण 97

24–भिखारीदास–काव्य निर्णय 9

25–शर्मा, डॉ. वेंकट–रस, अलंकार, छन्द तथा अन्य काव्यांग, पृ.73

26–मम्मट–काव्य प्रकाश 10.105

27–विश्वनाथ–साहित्य दर्पण 10.52

28–भिखारीदास–काव्य निर्णय छन्द सं. 10

29–भूषण–शिवराज भूषण, छंद संख्या 146

30–विश्वनाथ–साहित्य दर्पण 10.46

31–शर्मा डॉ. वेंकट–रस, अलंकार, छंद तथा अन्य काव्यांग पृ. 89

32–ललित ललाम, 214

33–काव्य प्रकाश, 10:112

34–काव्य प्रकाश 10:110

35–मतिराम–ललित ललाम, 194

36– काव्य प्रकाश 10:107

37–साहित्य दर्पण : 10:66

38–ललित ललाम : 196

39–काव्य प्रकाश 10:124